भगवत् कृपा

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संगपत्रिका

वर्ष-14, अंक-1 शनिवार, 26-1-91	सम्पादक : साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदासजी जनवरी, 1991	वार्षिक चन्दा-10.00 प्रति अंक : 1.00

तुमने हमको प्यार दिया है जितना, कौन करेगा इतना.....

3 फरवरी प.पू. काकाजी का स्वरूपानुभूति दिन अर्थात् एक ऐतिहासिक दिन, एक नूतन 'गुणातीत समाज' की स्थापना का दिन..... जिस-जिस ने भी उस आनंदकारी मूर्ति की गरिमा का जाने-अनजाने भी अनुभव किया है, दर्शन किया है, स्पर्श पाया है, ब्रह्मनाद सुना है—वह कभी भी उन्हें भुला नहीं पायेगा....उनके सम्बन्ध में आने वाले हरेक चैतन्य को—चाहे वह छोटा हो या बड़ा—महसूस होता था कि **पू. काकाजी मेरे विशेष है**.... सांगोपांग प्रभु को प्रगटाये हुई विभूति ही यह महसूस करा सकती है न? इसलिए ही आज भी हमारी चेतना उनके स्थूल दर्शन को ढूँढती रहती है—तरसती है। ''**वास्तव में वह इतने महान थे कि उनके साथ जब भी हम उठते-बैठते थे, हमें कभी यह महसूस नहीं हुआ कि हम उनसे छोटे हैं।**''

प.पू. काकाजी तो पहले से ही धरती पर एक अनोखी योजना लेकर ही अवतरित हुए थे। प्रभु बक्षिश देने, अक्षरधाम का सुख, शांति, आनंद बांटने से अधिक अनोखा या महत्त्वपूर्ण कार्य और कौन-सा भी हो सकता है? और वह भी मुफ्त में !!! गुरुहरि योगीजी महाराज ने अपने इस शिष्य को विरासत सौंपने 3 फरवरी 1952 का पवित्र दिन चुना....विरासत पाने के बाद प.पू. काकाजी ने इस दिन से एक नई क्रान्तिकारी घोषणा की...कि **'धरती पर विचरते प्रगट स्वरूप को पहचान कर उसके अभिप्राय की भक्ति में खो जाना।'** सभी गुरुहरि योगीजी महाराज को एक सामान्य साधु ही मानते थे। पर प.पू. काकाजी ने अक्षरधाम में जो गुरुहरि योगीजी महाराज का भव्य व दिव्य स्वरूप देखा था... उसका परिचय हरेक को दिया.... उन्होंने सिर्फ यह घोषणा ही नहीं की, बल्कि अपने अस्तित्वमात्र को मिटाकर इस योजना की पहल स्वयं से ही की।

ब्र.स्व. शास्त्रीजी महाराज और गुरुहरि योगीजी महाराज स्वयं की कल्याण पीढ़ी को अखंडित चालू रखने प.पू. काकाजी को साथ में ही लाये थे.... ब्रह्मविद्या कच्चा पारा है, वह हरेक नहीं निगल सकता। उसके लिए पात्र अत्यन्त शक्तिशाली चाहिए। ऐसा पात्र बनने के लिए केवल धर्मनिष्ठा ही नही चाहिये, बल्कि स्वरूपनिष्ठा, शूरवीरता, निर्भीकता, निडरता का होना जरूरी है.....सबसे अधिक तो अगर स्वरूप निष्ठा हो तो ब्रह्म-परब्रह्म का दर्शन होता है। आप ब्रह्मरूप होकर परब्रह्म के वाहक हो, तो ही संसार में सच्चा भगवत तत्त्व प्रचार करने के अधिकारी हो। गुरु को राजी करने वीर योद्धा का उत्साह, नदी के समान वेग, प्रभु बिना और कुछ नहीं चाहिए–ऐसी सच्ची लगन, तीव्र भूख और तत्परता चाहिए–यह सब कुछ गुरुहरि योगीजी महाराज ने प.पू. काकाजी में देखकर ही पसन्द किया....कोटि धन्यवाद हो उस समर्थ गुरु को जिसने ऐसे योग्य सुपात्र शिष्य को पसन्द किया....कोटि धन्यवाद हो उस शिष्य को जिसने स्वयं को हर प्रकार से मिटाकर गुरु की पसन्द को सार्थक किया। और तब ही तो (स्थूल रूप से) गुरुहरि योगीजी महाराज के अन्तर्धान होने पर भी–वे दावे से कहा करते थे–This power house is constant and continuous....!

प.पू. काकाजी बचपन से ही खूब निर्भीक, निडर, महत्त्वाकांक्षी थे। उनके जीवन के कई प्रसंगों से उनकी निडरता, शूरवीरता का दर्शन होता है...

एक बार प.पू. काकाजी बम्बई के नाणावटी सेठ जिनका फर्टिलाइजर का विशाल business था, उनके यहाँ Service के लिये interview देने के लिये गये। Interview की बात के दौरान नाणावटी सेठ ने पू. काकाजी को पूछाः 'पटेल फौरन (foreign) वॉरन गये हो क्या?' प.पू. काकाजी ने सहज उत्तर दिया–हाँ, दो बार गया हूँ। नाणावटी सेठ ने गर्व से कहा–मैं सात बार गया हूँ और पूरा World घूमा हूँ। प.पू. काकाजी ने यह बात सुनते ही एकदम कहा : सेठ ! **ऐसे तो नाविक अनेकों बार समुद्र के आर-पार आता जाता रहता है।'** कैसा निडरतापूर्ण था यह उत्तर? जिसकी चेतना अत्यधिक शुद्ध और पवित्र हो, वही व्यक्ति यह बात इतने बड़े सेठ के सामने जहाँ वह स्वयं service ढूँढने आया हो, इतनी निर्भीकता, शूरवीरता से कह सकता है न? प.पू. काकाजी का इतना सूझ-बुझ वाला बेहिचक व स्पष्ट उत्तर सुन नाणावटी सेठ अत्यधिक प्रभावित हुए और उसी क्षण प.पू. काकाजी को अपने सैक्रेटरी के रूप में appoint कर लिया। वैसे भी प.पू. काकाजी का व्यकितत्व, व्यवहार की मधुरता हरेक को सहज ही प्रभावित कर लेती थी। शास्त्रों में भी लिखा हैः ''अभयम् सत्त्व-शुद्धिः'' अर्थात् जिसकी चेतना शुद्ध, पवित्र हो वही अभय होकर स्पष्टता से ऐसे उद्‌गार कह सकता है।

प्रस्तुत प्रसंग प.पू. काकाजी के 1952 के साक्षात्कार से पहले का है, जिससे पता चलता है कि निर्भीकता का यह गुण प.पू. काकाजी में पहले से ही मौजूद था और अपने जीवन की अंतिम साँस तक विपरीत संजोगों में भी इसी शूरवीरता, निडरता से वे लड़ते रहे। इनका तो जीवनमंत्र था–

डरना नहीं, झुकना नहीं, हटना नहीं,
लड़ाई करनी सदा सर्वदा।
अजय में व विजय में

और आखिरकार–

इस लोक में व परलोक में !

गुरुहरि योगीजी महाराज की अभिप्राय की भक्ति करने प.पू. काकाजी ने क्या नहीं किया? सेवा के जिस क्षेत्र में बापा ने उन्हें जो भी जवाबदारी सौंपी वहाँ एक सेवक की अदा से सम्पूर्ण रूप से खो गये। युवक प्रवृत्ति में, साधु बनाने की योजना में, उनको संभालने की सेवा में, बहनों को भगवान भजने की सुविधा कर देने की पहल में, आत्मबुद्धि व प्रीति का एक आत्मीय समाज का सर्जन करने की सेवा में स्वयं के जीवन का समग्र अस्तित्व ही याहोम कर दिया...योगमाया के तांडवनृत्यों में भी केवल एक प्रभु का ही आधार-गुरुहरि की ओर ही निगाह रखकर भजन का–स्वरूप योग का, गुणगान का, कथावार्ता का, महिमा की बातों का ही एक अखाड़ा निरन्तर चालू ही रहा....असल में तो 1952 के साक्षात्कार के बाद उनका स्वयं का तो कुछ अधूरा रहा ही नहीं था। साक्षात्कार के बाद उन्होंने खूब स्पष्ट शब्दों में कहा था : **'अक्षरधाम के उस सुख शांति आनंद का विचार करता हूँ तब ख्याल आता है कि ऐसी कोई व्यक्ति, शक्ति, पदार्थ नहीं है जिसमें मेरा मन किंचित भी लुभा जाए।'** परन्तु समग्र गुणातीत समाज के हरेक आबाल-वृद्ध, स्त्री-पुरुष, गृही-तयागी सभी के सुख, शांति, आनंद , कल्याण के लिए ही जिये....अकारण ही सबक भला करने का उनका सहज स्वभाव....उनकी इस अलौकिक रीति, नीति, स्थिति को कोई न समझे और उपेक्षा करे, तो भी उसका दास बनकर आत्मीयता से ही पूरा जीवन वर्तते रहे; क्योंकि समग्र ब्रह्मसमाज उन्होंने खुत का ही माना था। जगत में या सत्संग समाज में अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने रिद्धि-सिद्धि या ऐश्वर्य प्रताप का उन्होंने कभी भी उपयोग नहीं किया, बल्कि सत्संग के हर कार्य में बेआबरू बने.....निरंतर अपमानों की ही परम्परा.... फिर भी, छुपे रहकर ही गुरुहरि को प्रसन्न करने की एकमात्र भक्ति...अरे ! किसी को आभासमात्र भी नहीं होने दिया कि **'मैं तेरे लिए इतना परिश्रम कर रहा हूँ।'**

प.पू. काकाजी का समग्र जीवन नैसर्गिकी गुणातीत अस्मिता व सच्ची-साधुता की परम्परा का दर्शन कराता है। राजा जनक का प्रसंग हम जानते है। उनकी मिथिला नगरी जल रही थी, पर तब भी वह अपने गुरु की आज्ञा से आश्रम में अपने गुरु के पास बैठे थे....यह प्रसंग तो हमने शास्त्रों में पढ़ा....पर प.पू. काकाजी हमारे सामने निरंतर ऐसा आदर्श जीवन जीकर गये–

बम्बई में 1954 की साल के अगस्त महीने में प.पू. काकाजी की फर्टिलाइर कम्पनी पर केस हुआ और आठ लाख तुरन्त भरने का notice के साथ वारंट आ गया। कोई और हो तो उसे Heart attack हो जाए क्योंकि उस समय कम्पनी Total loss में जा रही थी। परन्तु प.पू. काकाजी एकदम निश्चिंत ही रहे। ऐसे विपरीत संयोगों में या तो ढीठ निश्चिंत रह सकता है या फिर सचमुच जिसने प्रभु रखे हों...जिसे अपने गुरु का अतिशय भरोसा हो। प.पू. ककाजी का हमें अनुभव तो है–कि वह क्या थे? सुबह तो अखबारों की Heading में छप गया....बाजार में, समाज में सारी बात फैल गई परन्तु प.पू. काकाजी की मिठास, प्रसन्नता, हिम्मत, स्थिरता तनिक भी डावाँडोल नहीं हुई....वह जमानत

पर छूटकर शाम को पाँच बजे कपोलवाड़ी में गुरुहरि योगीजी महाराज के पास आये। बापा तो अन्तर्यामी सर्वज्ञ स्वरूप थे, सब जानते थे और पू. काकाजी खूब अच्छी तरह जानते थे कि **कर्ता-हर्ता तो मेरा यह प्रगट प्रभु ही है।** बापा की ही सारी लीला है। बापा को अपने इस शिष्य का और शिष्य को अपने गुरु का आपस में पूर्ण भरोसा था।

उपदेश देना, बातें करना खूब आसान है; पर इज्जत की ऐसी धज्जियाँ उड़ने के प्रसंग के समय स्थिर रहना, प्रभु को कर्ता-हर्ता मानना, भरोसा नहीं छोड़ना—वह कोई अलग कक्षा की ही बात है। पू. काकाजी तो दृढ़ता से यह बात मानते थे कि मेरा मालिक जिस पल, जब भी, जो भी प्रसंग में से मुझे प्रसार करावे, उसमें हँसते-हँसते प्रसार होना है।

बापा तो हर प्रसंग से अपने इस कोहिनूर हीरे की सबको पहचान कराना चाहते थे.....और भी अधिक कसौटी करके बापा ने कहाः ''दादुभाई ! प्रवचन करो।'' इस प्रसंग पर और कोई हो तो पहले तो सभा में ही न आये और अगर आवे भी तो ताने व उलाहने देने—कि—'हमने आपका इतना भरोसा करा, इतनी सेवा करी उसका फल यह दिया वगैरा.....' इसके बजाय पू. काकाजी तो जैसे लाखों रुपये का फायदा होने पर उमंग व उत्साह उमड़ता हो, उसी उमंग से प्रवचन के लिए खड़े हुए.....वह सभा ऐतिहासिक सभा बन गई ! सभी पू. काकाजी की ओर मौन होकर आश्चर्य से देख रहे थे। पू. ककाजी ने प्रवचन की शुरुआत की— **'जनक की मिथिला जलने वाली बात तो आपने सबने सुनी होगी पर मेरी मिथिला तो आज जल रही है; परन्तु मेरे सारथी—मेरे प्रभु—यह योगी बापा मूर्तिमान बैठे ही हैं, सो मैं निश्चिंत हूँ कि कुछ आँच आने वाली नहीं है।'**

पू. काकाजी के प्रवचन में न कोई घबराहट थी, न कोई जल्दीबाजी, न ही थर्रथराहट या कोई चिंता, न कोई फरियाद, न ही कोई बनावट। उनकी वाणी में, उनके मुख पर थी केवल एक प्राप्ति की मस्ती, प्रगट प्रभु के कर्ता-हर्तापन की दृढ़ प्रतीति ! विपरीत संजोगों में, मान-इज्जत चूर-चूर होने के समय महिमा समझना व गाना—वही है गुणातीत का सच्चा साधु ! मान में प्रफुल्लित नहीं हुए, अपमान में मुरझाये नहीं सानुकूल व प्रतिकूल संजोगों में हर स्पंदनों से ऊपर उठकर स्थिरता अखंडित पकड़ रखना—वही है भगवान प्रगटाये सच्चे साधु की साधुता का परिचय !

आईये ! हम सब इस पवित्र दिन पर बालक बनकर पुकार करें—हे काकाजी ! हमारा मन चंचल बंदर जैसा है, लेकिन अब इसे गुरुचरणों में निमग्न रखने की एक आदत डाल लें। आप ही हमारे प्राणाधार—चैतन्य आधार हो, आप सनातन नित्य सदा दिव्य साकार स्वरूप हो.....हमारी भीतरी यात्रा पूरी कराने आप हमारे हृदयाकाश में जहाँ धबक धबक धबकार होती है वहाँ विराजमान हो ही—यह प्रतीति पूर्णरूप से कराने ही आपने हमारे बीच से स्थूल रूप से छलांग मारी है। जब तक आप स्थूल रूप में थे, तब तक हम हमारे आलस गाफलाई में डूबे रहे.....हमें जाग्रत करने आपने यह कदम उठाया.....तो आपके बलिदान को समझें। आप खूब उदार दिल के थे, अभी भी आप प्रगट ही हो—तो हमारे अब तक के किये हुए को माफ

करना। आप हमारे रोज के गुनाहों का पन्ना तो फाड़ ही देते थे, पर अब नए प्रारब्ध न खड़े करें। आपके भक्तों के सुहृद् बनकर भावात्मक एकता से जीने की कोशिश करें। हमारी चेतना को मायिक जड़तंत्र से लड़ने की शक्ति देना। आपको स्वामिनारायण मंत्र की धून्य खूब प्रिय थी, आज भी आपकी धून्य का ब्रह्मनाद कानों में गूँजकर कहता है.....भजन करो ! भजन करो ! आप जैसे समर्थ का संबंध होने के बाद झूठे बन्धन, झूठी महोब्बत, स्वाभाविक पराधीनता, प्रकृति की गुलामी, धन, कीर्ति, मान की लालसा हमारे जीवन का स्तम्भ न हो बल्कि महिमा, स्वरूपनिष्ठा, सुहृदभाव हमारे जीवन का आधार बने.....एक दूसरे के अभाव, अमहिमा, टीका-चर्चा में समय बरबाद न करें। यह अमूल्य मौका लूट लें.....ऐसी दिव्यदृष्टि अनुग्रह करके हमारे देहाध्यासी जड़तंत्र पर डालकर आत्मा में सच्चा ज्ञानदीप प्रगटा देना। बस, धन्यवाद ! धन्यवाद ! की रटन ही 24 घंटे अंतर में लगी रहे.....यही आरझू !

□ □ □ □ □

स्वामी की बातें

161. अभी ख्याल नहीं पड़ता, पर हमें भगवान मिले हैं सो कृतार्थ (धन्य) हुए हैं।

प्र-4,9

162. भगवान से अंतराय (दूरी) रहता है उतना अंतर में दुःख रहता है। हमारी फिकर भगवान को है। भगवान हमारी रक्षा में हैं। जैसे बच्चे मां-बाप को गहने बनवाने के लिए कहते नहीं है, पर मां बाप स्वयं ही बनवा देते हैं; वैसे ही हमें भगवान को कहना नहीं पड़ेगा, वह स्वयं ही रक्षा करेंगे। तुम कहोगे कि भगवान के भक्त को देह में रोग क्यों आता है? वह तो देह में वासना खूब है, सो वह वासना तुड़वाने के लिए रोग देते (प्रेरते) हैं व बाद में शुद्ध करते हैं।

प्र4,11

163. तीर्थ के प्रति जल की बुद्धि नहीं करना व भगवान के भक्त के प्रति जाति भेद की बुद्धि नहीं करना। क्यों न भगवान का भक्त भंगी हो? पर, उसका सपरिवार मोक्ष होता है, अन्यथा तो चाहे बारह गुण युक्त ब्राह्मण भी हो, पर वह सिर्फ स्वयं का भी मोक्ष नहीं कर सकता।

प्र-4,12

164. हमारे प्रभु तो अभी यहाँ पृथ्वी पर हैं। इस बात में बहुत ही मर्म (रहस्य) है; जो जानते होंगे वे समझते होंगे। और ऐसी बातें व ऐसे साधु कभी भी पृथ्वी पर आये नहीं हैं और अब आयेंगे भी नहीं।

प्र-4,13

165. प्रगट भगवान मिले हैं, सो परिपूर्ण कल्याण मानना, पर अधूरा मानना नहीं; और साधन करने या साधु होना—वह सब तो कोई बाधा न हो इसलिए करना है, पर उपासना की दृढ़ता रखकर चिपके रहोगे—

तो पार उतर ही गये ! और जिस संत में भगवान हो उसकी सेवा करें व जिस रूप में भगवान मिले उसका ध्यान भजन करें–तो वह पुरुषोत्तम भगवान से मिलवा देगा।

प्र-4,15

166. सत्संग शब्द का अर्थ–बड़े संत का संग– वह सत्संग। और जिसने बड़े संत को वश किया उसे तो भगवान वश हो गये !

प्र-4,16

167. काम, क्रोध आदि जो अंतर के शत्रु हैं, उन्हें जीव अपनी ताकत से जीत पाये वैसे नहीं है, पर हम व बड़े संत तुम्हारे पक्ष में हैं व हम मदद करेंगे, सो जीत पाओगे। अतः आप हिम्मत रखकर लगे रहना। प्र-4,18

168. जीव को भला कराना हो, तो इस साधु के पास आकर बातें सुनना।

प्र-4,21

169. एक उपासना, दूसरी आज्ञा, तीसरा साधु का समागम व चौथा सत् शास्त्र का व्यसन–यह चार दृढ़ करके रखना।

प्र-4,22

170. .....गुणातीत ऐसे जो भगवान, उनके जीव दर्शन करे तो ब्रह्मरूप हो जाए, परन्तु भगवान की माया इतनी प्रबल है कि इस प्रकार दर्शन कर पाना कठिन है।

प्र -4,23

□ □ □ □ □

व्रतोत्सवसूची

1.	दि.	3.2.91	रविवार	ब्र.स्व.प.पू. काकाजी महाराज का साक्षात्कार दिन दिनांक 2 व 3 को अशोक विहार मंदिर में अखंड धून
2.	दि.	10.2.91	रविवार	एकादशी, व्रत
3.	दि.	12.2.91	मंगलवार	महाशिवरात्रि, व्रत
4.	दि.	25.2.91	सोमवार	एकादशी, व्रत

❋ ❋ ❋ ❋

PUBLISHED BY SADHU MUKUNDJIVANDAS FOR YOGI DIVINE SOCIETY
A 103, Ashok vihar-III, Swaminararan Marg. Kakaji Lane,
Delhi-110 052. (India) Tel. : 7229327, 7128838
Printed at **R.P. Printers,** Shahadra, Delhi-110032